डॉ0 शिप्रा प्रभा
सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग
मगध महिला कॉलेज,पटना
email- gyanshipra31@gmail.com

भारतेन्दुयुगीन काव्य

पृष्ठभूमि

डॉ0 नगेन्द्र ने भारतेन्दु काल को पुनर्जागरण काल कहा है। पुनर्जागरण या नवजागरण का अर्थ है 'किसी लुप्तप्राय अथवा विसरी हुई संस्कृति एवं सभ्यता का पुनः जीवित या सचेत होना।' साधारण शब्दों में 'अपनी संस्कृति, सभ्यता एवं अस्तित्व के प्रति मानव–हृदय में नयी चेतना के विकास को नवजागरण की संज्ञा दी जा सकती है। हिन्दी नवजागरण का अपना स्वतंत्र अस्तित्व है और इसके अग्रदूत हैं – भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।

भारतेन्दु युग की पृष्ठभूमि के अवलोकनोपरान्त हम पाते हैं कि यह वह समय था जब भारत में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक सभी स्तरों पर नयी चेतना विकसित हो रही थी।

ब्रिटिश राज्य की स्थापना के परिणामस्वरूप नयी आर्थिक व्यवस्था, पाश्चात्य शिक्षा और नवागत जीवन–पद्धति ने भारत देश की पहचान को धूमिल कर दिया। पश्चिमीकरण और भारतीयकरण के अन्तर्विरोधों ने भारत के प्रबुद्ध वर्ग को नये सिरे से स्वयं की पहचान करने पर विवश किया। इस प्रबुद्ध वर्ग ने पश्चिमीकरण के विवेकसम्मत परिवेश में अपनी संस्कृति को नये ढंग से संघटित करने का प्रयास किया। इसके फलस्वरूप साहित्यकारों ने अतीत को सामने रखकर अपने को पुनः गौरवान्वित अनुभव किया और देश में उभरती हुई राष्ट्रीय चेतना को ठोस रूप दिया।

ब्रह्मसमाज, प्रार्थना–समाज, आर्य–समाज, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद, ईश्वरचनद्र विद्यासागर के विचारों तथा थियॉसॉफिकल सोसाइटी के सिद्धांतो के प्रभाव से सामाजिक व सांस्कृतिक नवजागरण के कारण देश में अत्यधिक संवेदनशील सशक्त मध्यवर्ग उभर कर सामने आया जिसने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में सुधार की आवश्यकता का अनुभव किया। भारतेन्दु इसी चेतना का प्रतिनिधित्व करते हैं। उन्होंने सही समय पर हिन्दी साहित्य को उचित नेतृत्व प्रदान किया और अपनी रचनाओं से जागरण का संदेश दिया।
इस युग में जन–चेतना जनजागरण की भावना से अनुप्राणित थी। इसलिए सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक क्षेत्रों में न केवल अतिरिक्त सक्रियता थी अपितु इन सब में गहन अंतःसम्बन्ध भी विद्यमान था। भारतेन्दुयुगीन कविकर्तृत्व पर इसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था। इसकी परिणति विषयचयन में व्यापकता और विविधता के रूप में हुई। मातृभूमि–प्रेम, स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग, गोरक्षा, बालविवाह–निषेध, शिक्षा –प्रसार का महत्त्व, मद्य–निषेध आदि विषयों को कविगण अधिकाधिक अपनाने लगे थे।

भारतेन्दु और उनके सहयोगी कविगणों ने विषय और शिल्प की दृष्टि से ब्रजभाषा काव्य की परंपराओं का प्रभाव तो ग्रहण किया, लेकिन साथ ही तत्कालीन देश–काल के सामाजिक स्पंदन और जातीय जागरण से जुड़े आंदोलनों को भी अपनी कविता का विषय बनाया। भारतेन्दु युग को आधुनिक–काल का प्रवेश–द्वार भी कहा जा सकता है और प्रवृत्तियों की दृष्टि से संधिकाल माना जा सकता है। वस्तुतः कविता की दृष्टि से कवियों का जहाँ पुरानी परंपराओं से मोह अभी छूटा नहीं था और दूसरी ओर नवयुग की नवीन भावना भी अपना प्रभाव दिखाने लगी थी। **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल** के शब्दों में, ''प्राचीन और नवीन के इस संधिकाल में जैसी शीतल कला का संचार अपेक्षित था वैसी ही शीतल कला के साथ भारतेन्दु का उदय हुआ, इसमें संदेह नहीं।''

समय–सीमा

भारतेन्दु–युग की समय–सीमा के विषय में विद्वानों में मतभेद है। विभिन्न आधारों पर विद्वानों ने भारतेन्दु–युग की समय–सीमा का निर्धारण निम्न प्रकार से किया है :–

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल	–	1868	ई0	से	1893	ई0 तक
मिश्रबंधु	–	1869	ई0	से	1888	ई0 तक
डॉ0 रामकुमार वर्मा	–	1870	ई0	से	1900	ई0 तक
डॉ0 केशरीनारायण शुक्ल	–	1865	ई0	से	1900	ई0 तक
डॉ0 रामविलास शर्मा	–	1868	ई0	से	1900	ई0 तक
डॉ0 नगेन्द्र	–	1868	ई0	से	1900	ई0 तक

डॉ0 नगेन्द्र ने भारतेन्दु युग का आरंभ भारतेन्दु द्वारा सम्पादित मासिक पत्रिका 'कविवचनसुधा' के प्रकाशन वर्ष 1968 ई0 तथा समाप्ति 'सरस्वती' के प्रकाशन वर्ष 1900 ई0 को माना है, जो उचित प्रतीत होता है।

प्रवृत्तियाँ

भारतेन्दुयुगीन कवियों का काव्य–फलक बहुत विशाल है। उनकी रचना–प्रवृत्तियाँ एक ओर भक्तिकाल और रीतिकालीन विशेषताओं से जुड़ी हैं तो दूसरी ओर समकालीन परिवेश के प्रति जागरूकता का भी उनमें अभाव नहीं है। इस परिप्रेक्ष्य में भारतेन्दु–युग की साहित्यिक विशेषताओं को निम्नलिखित रूप में देखा जा सकता है–

1. **राष्ट्रीयता :–** भारतेन्दुयुगीन कवियों ने भारतीय इतिहास के गौरवशाली पृष्ठों की अनेक बार स्मृति दिलायी,किन्तु उनकी राष्ट्रीय भावना यहीं तक सीमित नहीं रहीं। उन्होंने अँग्रेजों की विचारधारा और उनकी देश–भक्तिपूर्ण कविताओं से भी यथेष्ठ प्रेरणा ली। इसका परिणाम यह हुआ कि वे क्षेत्रीयता से ऊपर उठकर संपूर्ण राष्ट्र की नब्ज टटोलने में समर्थ हो सके। देश के उत्कर्ष और

अपकर्ष के लिए उत्तरदायी परिस्थितियों पर प्रकाश डाल कर इस युग के कवियों ने जनमानस में राष्ट्रीय भावना के बीजवपन का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। भारतेन्दु–युग में राष्ट्रीय चिंतनधारा के दो पक्ष हैं– देशप्रेम और राजभक्ति।

देशप्रेम : देशप्रेम के अंतर्गत उन्होंने 'हिन्दी,हिन्दू और हिन्दुस्तान' का गुणगान किया।

''चहहु जु साँचहु निज कल्यान, तौ सब मिलि भारत संतान।
जपो निरन्तर एक ज़बान, हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान।।

–प्रतापनारायण मिश्र

'हमारो उत्तम भारत देस' (राधाचरण गोस्वामी) और 'धन्य भूमि भारत सब रतननि की उपजावनि (प्रेमघन) आदि काव्य पंक्तियाँ , भारतेन्दु की 'विजयिनी विजय वैजयन्ती' प्रेमघन की 'आनन्द अरुणोदय' प्रतापनारायण मिश्र का 'महापर्व', 'नया संवत्' तथा राधाकृष्ण दास की 'भारत बारहमासा' और 'विनय' शीर्षक कविताएँ देशभक्ति का संदेश देती हैं। अंग्रेजों की शोषण–नीति को भारतेन्दु ने व्यंग्योक्तियों के माध्यम से भी व्यक्त किया है–

''भीतर भीतर सब रस चूसै, हँसि हँसि के तन मन धन मूसै।
ज़ाहिर बातन में अति तेज़, क्यों सखि साजन! नहिं अंगरेज़।।

राजभक्ति : अँग्रेजों द्वारा देश–हित में किए गये कार्यों के इस काल के कवियों ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। इस युग की राजभक्तिपरक कविताओं में भारतेन्दु की 'भारतभिक्षा', 'विजयवल्लरी' और 'रिपनाष्टक' प्रेमघन की 'स्वागत', 'हार्दिक हर्षादर्श' राधाकृष्णदास की 'मेक्डानल्ड पुष्पाँजलि', 'विजयिनी विलाप' आदि प्रसिद्ध कविताएँ हैं। ड्यूक ऑफ एडिनबरा के स्वागत, रानी विक्टोरिया के शासन–काल की प्रशंसा और उनकी मृत्यु पर शोक–संदेश, लार्ड रिपन के प्रति श्रद्धांजलि आदि विषयों पर लिखित कविताएँ तत्कालीन राजनीतिक चेतना का प्रतीक मानी जानी चाहिए, क्योंकि ये ही कवि दूसरी ओर देश की पतनावस्था को बताते हुए, ईश्वर से देश की रक्षा की कामना भी करते हैं–

'कहाँ करुणानिधि केशव सोए ?
जागत नहिं अनेक जतन करि भारतवासी रोए।

2. सामाजिक चेतना : पुनर्जागरण के इस युग में सामाजिक चेतना पहली बार काव्य–विषय के रूप में उभर कर सामने आयी। भारतेन्दुयुगीन कवियों ने जनता की सामाजिक समस्याओं का निरूपण व्यापक ढंग से किया। इस युग के कवियों ने बाह्याडम्बरों, बाल–विवाह और विधवा–विवाह के विरोध के साथ–साथ ही नारी–शिक्षा, विधवाओं की दुर्दशा और अस्पृश्यता को लेकर अनेक सहानुभूतिमूलक कविताएँ लिखी। भारतेन्दु ने 'भारत दुर्दशा' नाटक में वर्णाश्रम धर्म की संकीर्णता का विरोध ''बहुत हमने फैलाए धर्म, बढ़ाया छुआछूत का कर्म।'' कहकर किया तो 'मन की लहर' में प्रतापनारायण मिश्र की दृष्टि बाल–विधवाओं की करुण दशा की ओर गयी है– ''कौन करेजो नहिं कसकत सुनि विपति बालविधवन की।'

स्त्री–सुधार के उद्देश्य से ही भारतेन्दु ने 'बालबोधिनी' पत्रिका भी निकाली थी। प्रतापनारायण मिश्र ने स्त्री–शिक्षा के समर्थन और बालविवाह के विरोध में लिखा है–

''निज धर्म भली विधि–जानै, निज गौरव पहिचानै।
स्त्रीगण को विद्या देवैं, करि पतिव्रता यश लेवै।

झूठी यह गुलाब की लाली, धोवत ही मिट जाय।
बाल विवाह की रीति मिटाओ, रहे लाली मुख छाप।''

स्पष्ट ही इन कवियों की सामाजिक चेतना का एक पक्ष सुधारवादी था तो दूसरा यथार्थवादी।

3. आर्थिक चेतना : आर्थिक पराभव का चित्रण भी इस काल के कवियों ने ईमानदारी से किया है। भारतीय अर्थ–व्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए कवियों ने स्वदेशी उद्योगों को प्रोत्साहन देने और स्वदेशी वस्तुओं के प्रचार–प्रसार पर विशेष बल दिया। 'प्रबोधिनी' शीर्षक कविता में भारतेन्दु ने विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार पर विशेष बल दिया। यद्यपि प्रेमघन, अंबिकादत्त व्यास, राधाकृष्ण दास आदि कवियों ने अंग्रेजों द्वारा दी गई जैसे– सुविधाओं, जैसे बिजली, यातायात के साधन, सिंचाई की सुविधा, शिक्षा–प्रसार आदि की प्रशंसा की है, लेकिन वे यह नहीं भूल सके हैं कि सामान्य जनता, और किसानों, मजदूरों की दरिद्रता लगातार बढ़ती गई है। इसलिए उन्होंने शासक–वर्ग के आर्थिक शोषण का घोर विरोध किया। प्रतापनारायण मिश्र देश की दुर्दशा पर चिंता व्यक्त करते हुए कहते हैं–

''अभी फिर देखिए क्या दशा देश की हो, बदलता है रंग आसमां कैसे कैसे!''

अकाल, महँगाई, करों के दुर्दम्य बोझ से त्रस्त मानव–जीवन कवि की करुणा और रोष को जगाता है। बालमुकुन्द गुप्त ने कृषकों के जीवन की विडम्बना इन शब्दों में व्यक्त की है–

''जिनके कारण सब सुख पावै, जिनका बोया सब जन खाय।
हाय हाय उनके बालक नित भूख के मारे चिल्लाय।
अहा बिचारे दुःख के मारे निस दिन पच पच मरे किसान।
जब अनाज उत्पन्न होये तब सब उठवा ले जाए लगान।

भारतेन्दु ने पाश्चात्य सभ्यता के सम्पर्क में देश के सांस्कृतिक उत्थान की अनिवार्यता अनुभव करते हुए ब्रिटिश शासन द्वारा किये जा रहे आर्थिक शोषण का संकेत यह कहकर किया है–

'अंगरेज राज सुख साज सबै सब भारी।
पै धन विदेस चलि जात इहै अति ख्वारी।'

परिवार, समाज और देश की क्रमशः बढ़ती हुई हीनावस्था कवियों की वाणी को जहाँ करुणा से भर देती है वहीं शासक–वर्ग की अनीतियों के विरुद्ध जन–जागरण का संदेश भी देती है।

4. **भक्ति–भावना :** भारतेन्दु–युग की कविताओं में जहाँ नवजागरण और समसामयिक जीवन का स्वर है वहीं उसमें भक्तिकालीन भक्ति का स्वरूप भी देखने को मिलता है। इन कवियों की भक्ति के तीन रूप है – निर्गुण भक्ति, वैष्णव भक्ति और स्वदेशानुराग–प्रेरित भक्ति। इनमें से प्रथम दो का पारम्परिक स्वरूप ही दिखता है। भक्ति और देशप्रेम को एक ही बिन्दु पर लाकर अभिव्यक्त करने की शैली निश्चय ही मौलिक व नवीन है।

निर्गुण भक्ति : निर्गुण भक्ति इस काल की मुख्य साधना–दिशा नहीं थी, फलस्वरूप कुछ कवियों ने परम्परा के प्रभाव–स्वरूप संसार की नश्वरता, माया–मोह की व्यर्थता, विषयासक्ति की निंदा आदि विषयों पर तो उपदेशात्मक ढंग से विचार किये हैं, किन्तु ब्रह्म–चिन्तन और हठयोग–जैसे विषयों पर काव्य–रवना उन्हें अभीष्ट नहीं रही।

वैष्णव भक्ति : वैष्णव भक्ति में राम और कृष्ण की भक्ति के साथ–साथ कतिपय देवी–देवताओं का भी स्तवन किया गया है। रामकाव्य की अपेक्षा कृष्णभक्ति काव्य की रचना इस युग में अधिक हुई। भारतेन्दु राधा–कृष्ण के

अनन्य भक्त थे। वल्लभ–संप्रदाय में दीक्षित होने के कारण उनके अनेक पदों में सख्य और विनय भाव की भक्ति का अधिक निरूपण मिलता है। उन्होंने स्पष्ट स्वीकार किया है– ''मेरे तो साधन एक ही हैं, जगनन्दलला वृषभानुदुलारी।'' भक्ति–भावना की दृष्टि से प्रेमघन की 'अलौकिक लीला', अंबिकादत्तव्यास का 'कंसवंध', राधाकृष्णदास की 'कृष्ण–स्तुति', धनारंग दुबे की 'कृष्णरामायण' आदि रचनाएँ महत्त्वपूर्ण हैं। रामभक्तिमूलक रचनाओं में हरिनाथ पाठक की 'ललित रामायण', अक्षय कुमार की 'रसिक विलास रामायण' और बाबू तोताराम की 'राम–रामायण' प्रसिद्ध है।

स्वदेशानुराग प्रेरित भक्ति : इसके अंतर्गत इस युग के कवियों ने धार्मिक सहिष्णुता और समन्वय भावना को महत्त्व दिया। 'प्रबोधिनी' शीर्षक कविता की 'डूबत भारत नाथ बेगी जागो अब जागो' जैसी पंक्तियों के माध्यम से भारतेन्दु ने जातीयता राष्ट्रीयता और भक्ति–भावना को समरेखा प्रदान की है तो वहीं ''कहाँ करूणानिधि केसव सोए'' में भी भक्ति से साथ–साथ तत्कालीन सामाजिक विसंगतियों को भी उभारने का प्रयास किया है। 'हम आरत भारत वासिन पै अब दीनदयाल दया करिए'– कहकर प्रतापनारायण मिश्र ने भी ईश्वरभक्ति और देशभक्ति का समन्वय प्रस्तुत किया है।

5. **श्रृंगारिकता** : भारतेन्दु और उनके समकालीन कवियों ने अपनी रचनाओं में विविध रसानुभूतियों का समावेश किया है, जिसमें श्रृंगार रस प्रमुख है। रीतिकालीन काव्य की परंपरा का अनुसरण करते हुए कवियों ने सामान्यतः राधा–कृष्ण के संदर्भ में प्रेम और सौन्दर्य का वर्णन किया है। भारतेन्दु ने 'प्रेम सरोवर', 'प्रेम माधुरी', 'प्रेम तरंग', 'प्रेम फुलवारी' आदि में भक्ति–श्रृंगार और कहीं कहीं विशुद्ध श्रृंगार को व्यंजित किया है। प्रेमधन की 'युगलमंगल स्तोत्र' तथा 'वर्षा बिन्दु' भी इसी प्रकार की रचनाएँ हैं। भारतेन्दु के कुछ सवैयों (छन्द) में घनानन्द जैसी सरसता देखी जा सकती है। अंबिकादत्त व्यास का 'पावन पंचासर' श्रृंगाररस का मनोहारी वर्णन प्रस्तुत करता है। जगमोहनसिंह ने प्रेम का जो निश्छल, रागात्मक वर्णन 'प्रेमसम्पत्तिलता' में प्रस्तुत किया है, वह अनुपम है–

''अब यों उर आवत है सजनी, मिली जाउं गरे लगि कै छतियां।
मन की करि भांति अनेकन औ मिली कीजिय री इस की बतियां।।
हम हारि अरी करि कोटि उपाय, लिखी बहु नेह भरी पतियां।
जगमोहन मोहनी मूरति के बिना कैसे कटें दुख की रतियां।।

इस युग के कवियों ने रीतिकालीन कवियों की भाँति उन्मुक्त श्रृंगार का नहीं, वरन् मर्यादित श्रृंगार का वर्णन किया है।

6. **प्रकृति–चित्रण** : भारतेन्दुयुगीन कविता में प्रकृति का रूप–स्वरूप परम्परित ही है। बँधी–बँधाई परिपाटी पर प्रकृति का आलम्बन और अलंकृत रूप ही इस काल की कविताओं में देखने को मिलता है। कहीं–कहीं ऋतु–वर्णन की अपेक्षा ऋतु विशेष में नायक–नायिका की मनोभावनाओं का वर्णन अवश्य मिल जाता है। जहाँ तक प्रकृति के स्वतन्त्र रूप के चित्रण का प्रश्न है, वह बालमुकुन्द गुप्त, प्रतापनारायण मिश्र और भारतेन्दु में ही मिलता है। भारतेन्दु की 'बसन्त होली', अंबिकादत्त व्यास की 'पावस पचासा', गोविन्द गिल्लाभाई की 'षड्ऋतु' और 'पावस पयोनिधि' आदि में बसंत ऋतु और वर्षा–ऋतु के आलम्बनात्मक चित्रण के स्थान पर कवियों ने नायक–नायिका की मनोदशाओं के चित्रण में अधिक रुचि दिखाई है। प्रकृति को श्रृंगारिक मनोदशाओं, सामाजिक उद्बोधन और नीति–कथन आदि से सम्बद्ध करने का भी सत्प्रयास मिलता है। भारतेन्दु की 'प्रात–समीरन' 'प्रेमघन' की 'मयंक महिमा' प्रतापनारायण मिश्र की 'प्रेम

पुष्पांजलि' इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। जगमोहनसिंह की कविताओं में प्रकृति के सूक्ष्म निरीक्षण और नैसर्गिक दृश्यों का अत्यंत सुन्दर चित्रण हुआ है, जैसे कि पर्वत–श्रृंखला की शोभा का चित्र–शैली में किया गया यह चित्रण द्रष्टव्य है–

''पहार अपार कैलास से कोटिन ऊंची शिखा लगी अंबर चूम।
निहारत दीठि भ्रमै पगिया गिरि जात उतंगता ऊपर झूम।।
प्रकाश पतंग सों चोटिन के विकसै अरविन्द मलिन्द सुझूम।
लसै कटि मेखला के जगमोहन कारी घटा घन घोरत धूम।।''

7. **हास्य–व्यंग्य** : भारतेन्दु युग में कवियों की प्रकृति हास्य–व्यंग्य से भी पूरित दिखाई देती है। इन्होंने समाज में व्याप्त अंधविश्वासों, विसंगतियों, रूढ़ियों आदि के साथ–साथ पाश्चात्य सभ्यता, अंग्रेजों की शासन नीति आदि पर व्यंग्य करने के लिए विषय और शैली की दृष्टि से अनेक प्रयोग किए है। भारतेन्दु ने अपने नाटकों के प्रगीतों में व्यंग्य गीतियों और मुकरियों की भी रचना की। 'बंदरसभा' के गीतों की रचना उन्होंने उर्दू–नाटक 'इन्दर–सभा' के गीतों की पैरोडी के रूप में की। 'उर्दू का स्यापा' स्यापा शैली तथा 'समधिन मधुमास' गाली शैली में रचित है। 'नए जमाने की मुकरी' शीर्षक से तत्कालीन सामाजिक,राजनीतिक विसंगतियों को उभारने का प्रयास किया है। मद्यपान के विषय में मुकरी में व्यंग्य का तीखापन देखा जा सकता है–

''मुंह जब लागै तब नहिं छूटे, जाति मान धन सब कुछ लूटे।
पागल करि मोहिं करे खराब, क्यों सखि साजन, नहिं सराब।।''

अंग्रेजी शिक्षा–प्राप्त युवा–वर्ग द्वारा पाश्चात्य सभ्यता के अंधानुकरण पर उनका मार्मिक व्यंग्य है–

जग जानैं इंगलिश हमें वाणी वस्त्रहि जोय।
मिटै बदन पर श्याम रंग जन्म सुफल तब होय।।

प्रेमघन–सर्वस्व के 'हास्य बिंदु' प्रकरण में तत्कालीन अनेक असंगतियों पर विनोदपूर्ण व्यंग्य मिलता है। इसी प्रकार प्रतापनारायण मिश्र की हरगंगा, बुढ़ापा, ककाराष्टक आदि कविताएँ इसी दृष्टि से प्रसिद्ध हुई।

8. **रीति–निरूपण** : रीतिकालीन रीति–निरूपण–पद्धति का प्रयोग इस काल में भी हुआ किन्तु न के बराबर। लछिराम ब्रह्मभट्ट, कविराज मुरारिदान और बालगोविन्द मिश्र ने इस दिशा में कार्य किया है। रीति निरूपक ग्रंथों में लछिराम का 'महेश्वर विलास', 'रामचन्द्र भूषण' और 'रावणेश्वर कल्पतरु', मुरारिदान का 'जसवन्त जसोभूषन', बालगोविन्द मिश्र का 'भाषा छन्द प्रकाश' और प्रतापनारायण मिश्र कृत 'रसकुसुमाकर' प्रसिद्ध है।

9. **समस्यापूर्ति** : समस्यापूर्ति भारतेन्दु–युग की लोकप्रिय काव्य–पद्धति थी। कवियों की प्रतिभा और रचना–कौशल को परखने–हेतु कठिन विषयों पर कवि–गोष्ठियों में समस्यापूर्ति करायी जाती थी। प्रतिष्ठित कवि इनमें भाग लेने में संकोच नहीं करते थे और नये कवियों का इससे उत्साहवर्द्धन होता था। ये समस्यापूर्तियाँ प्रायः श्रृंगार–प्रधान होती थीं, किन्तु कभी–कभी नवीन सामाजिक परिवेश भी इनका विषय बन जाता था। दुर्गादत्त व्यास का 'समस्यापूर्ति–प्रकाश', अम्बिकादत्त व्यास का 'समस्यापूर्ति–सर्वस्व', गोविन्द गिल्लाभाई का 'समस्यापूर्ति–प्रदीप' इत्यादि उल्लेखनीय है।

10. **काव्यानुवाद** : भारतेन्दु युग के कवियों ने हिंदी और ब्रजभाषा में मौलिक रचनाओं के साथ–साथ संस्कृत की अनेक रचनाओं के अनुवाद भी किए। राजा लक्ष्मणसिंह द्वारा अनुदित 'रघुवंश' और 'मेघदूत' उल्लेखनीय कृतियाँ है जिनमें भावान्तरण की सरसता, शैली का लालित्य, शुद्ध ब्रजभाषा तथा सवैया छंद के

माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। भारतेन्दु ने 'नारद–भक्ति–सूत्र' और शांडिल्य के 'भक्ति–सूत्र' को 'तदीय सर्वस्व' और 'भक्तिसूत्र वैजयन्ती' शीर्षक से अनुदित किया, जिनमें प्रतिपाद्य की प्रेषणीयता पर अधिक ध्यान दिया गया। ठाकुर जगन्मोहनसिंह द्वारा अनुदित रचनाएँ 'ऋतुसंहार और 'मेघदूत' विशेष उल्लेखनीय हैं।

अंग्रेजी की ललित काव्य रचनाओं के रूपान्तरण की ओर ध्यान दिलाने का श्रेय श्रीधर पाठक को है, जिन्होंने गोल्डस्मिथ की 'हरमिट' और 'डेज़र्टेड विलेज' को 'एकान्तवासी योगी' और 'ऊजड़ ग्राम' शीर्षक से अनुदित किया। इस प्रकार काव्यानुवाद को प्रोत्साहन देने और इसके साथ ही ब्रजभाषा के साहित्य को समृद्ध करने की दिशा में यह योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ।

कलापक्ष

काव्य–रूप : काव्यरूप की दृष्टि से इस युग की रचनाएँ मुक्तक शैली में ही लिखी गयी हैं। रामभक्ति और कृष्णभक्ति से प्लावित कतिपय प्रबन्ध आपवादिक रचनाएँ ही हैं। प्रगीत मुक्तकों की रचना की दृष्टि से यह काल समृद्ध कहा जा सकता है। ठुमरी, मलार,दादरा,ईमन आदि राग–रागिनियों में प्राचीन पद–शैली की रचना इसका प्रमाण है। हरिनाथ पाठक की 'श्री ललित रामायण', प्रेमघन की 'जीर्ण जनपद' मुक्तक काव्य के उदाहरण हैं। भारतेन्दु की 'रानी छद्मलीला, देवी छद्मलीला और तन्मयलीला प्रबन्ध–गीति के उदाहरण हैं। प्रेमघन और प्रतापनारायण मिश्र की कजलियाँ, भारतेन्दु का 'वर्षा विनोद', तथा प्रतापनारायण मिश्र,राधाचरण गोस्वामी और जगमोहन द्वारा रचित लावनियों में लोकसंगीत की शैली देखी जा सकती है। रीतिकालीन सतसई परंपरा का अनुसरण करते हुए 'कृष्ण शतक' और 'सुकवि सतसई' आदि रचनाएँ देखी जा सकती हैं। भारतेन्दु द्वारा 'रसा' उपनाम से और प्रेमघन द्वारा 'अब्र' उपनाम से उर्दू में गज़ल आदि की रचना भी नवीन प्रयोग है। प्रतापनारायण मिश्र की प्रवृत्ति कसीदा, शेर, मरसिया आदि लिखने की भी थी। इस रूप में इस युग के कवियों ने काव्यरूप के क्षेत्र में यथासंभव नवीन प्रयोग किए।

भाषायी चेतना : भारतेन्दुयुगीन कविता की भाषा ब्रजभाषा के लालित्यपूर्ण और कमनीय रूप से सज्जित है। एक ओर ब्रजभाषा का ललित प्रयोग और दूसरी ओर खड़ी बोली का प्रयोग इस काल की भाषायी चेतना के दो छोर हैं। ब्रजभाषा की माधुरी पर रीझे हुए भारतेन्दु ने स्वीकार किया था कि, ''ब्रजभाषा में ही कविता करना उत्तम होता है, और इसी से सब कविता ब्रजभाषा में ही उत्तम होती है।'' इस रूप में भारतेन्दु युग में भले ही विषय की दृष्टि तत्कालीन परिस्थितियों, सुधारवादी मनोवृत्ति, जनजागरण को लिया हो लेकिन भाषा ब्रजभाषा ही रही। भक्ति काव्य और श्रृंगार–काव्य में कोमलकांत पदावली और वीरकाव्य में ओजपूर्ण शब्दावली का प्रयोग दर्शनीय है। खड़ीबोली में लिखी गई कतिपय रचनाएँ हैं– भारतेन्दु का फूलों का गुच्छा, प्रेमघन की मयंक महिमा और प्रतापनारायण मिश्र की कविताएँ।

अलंकार और छन्द–योजना : सामान्यतः कवियों ने रीतिकालीन अलंकरण प्रवृत्ति का अनुकरण नहीं किया है। प्रसंगवश अलंकारों के सहज प्रयोग में भारतेन्दु की 'यमुना–छवि' जैसी कुछ कविताओं में उत्प्रेक्षा, संदेह आदि अर्थालंकारों की प्रमुखता लक्षित होती है। शब्दालंकारों में अनुप्रास, यमक, श्लेष आदि का सहज रूप से अभिनिवेश है। भारतेन्दु और उनके सहयोगी

कवियों ने मुख्यतः पदशैली में ही कविताएँ लिखीं है, फिर भी परंपरित छंद योजना सभी कवियों के काव्य में मिलती है। दोहा, चौपाई, सोरठा, कुण्डलिया, रोला आदि मात्रिक छन्द और कवित्त, सवैया, शिखरिणी, वंशस्थ, वसन्ततिलका आदि वर्णिक छंद कवि समुदाय में विशेष प्रचलित थे। भारतेन्दु ने उर्दू छंदों में काव्य रचना के साथ 'प्रात समीरण' कविता में बँगला के 'पयार' छंद का प्रयोग भी किया है।

मूल्यांकन :–

भारतेन्दु युग की मुख्य उपलब्धि यह है कि इसके पूर्व रीतिकाल में जिससे वैयक्तिक श्रृंगारमयी काव्यधारा पर बल मिल रहा था, उसके स्थान पर कविगण समाज और राष्ट्र को उद्‌बोधन देने वाली लोकमंगलकारी दृष्टि की ओर उन्मुख होने लगे थे, जिसकी पूर्ण परिणति आगे चलकर द्विवेदी युग में लक्षित हुई।

इस काल के कवि एक ओर रीतियुगीन परिपाटी का दामन पकड़े हुए हैं तो दूसरी ओर घोर श्रृंगार के प्रतिक्रियास्वरूप भक्तिभाव वलयित आदर्श का और जब ये दोनों परिपाटियाँ उनके हाथ से छूटी हैं, तो निश्चय ही वे सुधारवादी जीवन–दृष्टि को प्रतिबिम्बित करने वाली कविताओं का आईना लेकर सारे समाज में घूमते फिरे हैं। इस काल में लिखी गयी कविता में वस्तुपरकता, वर्णनात्मकता और इतिवृत्तात्मकता है। अपवादस्वरूप जगमोहन सिंह और भारतेन्दु में सौन्दर्यवादी जीवन–दृष्टि का संकेत भी मिलता है। आज जिस पूर्णता के साथ कविता में मनुष्य को पूर्ण अभिव्यक्ति मिल रही है, उसका सूत्रपात भारतेन्दुकालीन कवियों की रचनाओं में हो गया था। अन्त में यह कहना समीचीन होगा कि भारतेन्दु–युग के कवियों की सबसे बड़ी विशेषता प्राचीन और नवीन का समन्वय करने में है।

सहायक पुस्तक :–

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ0 नगेन्द्र
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
3. हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल – डॉ0 हरिचरण शर्मा
4. हिन्दी भाषा और साहित्य – किरण बाला